

**THE ECONOMIC TIMES**

*Date: 23-05-18*

## Special Privileged Strategic Partnership

### ET Editorials

Prime Minister Narendra Modi's informal summit with newly re-elected Russian President Vladimir Putin at Sochi serves as an opportunity to reaffirm and redefine the long-standing India-Russia relationship. Over the last few years, India has expanded its bilateral and strategic relationships with countries that look askance at Moscow. On its part, Moscow has been forging closer ties with Beijing and Islamabad. The Sochi summit is an effort to put in place a communication channel at the highest level that will serve to address concerns, and identify and build on common interests and ties.

The Sochi summit comes in the background of US President Trump's America-First isolationism combined with a trigger-happy policy on sanctions under the Countering America's Adversaries through Sanctions Act (CAATSA). Such sanctions are an irritant for India's defence cooperation with Russia and economic partnership with Iran. Russian involvement in electoral campaigns in the west along with the alleged, Kremlin-directed poisoning of Russian defectors, on top of Russia's annexation of Crimea, have badly strained Moscow's relations with the West, and pushed it closer to Beijing. For India, this is a cause for concern, especially along with Moscow's overtures to Islamabad. While there is no need for India to follow the western script on Russia, it must expand its strategic engagement with the west. The Sochi summit is to help redefine the long-standing India-Russia relationship in the current geopolitical context and a common commitment to building a multipolar world order.

Building on the past, the leaders reiterated their commitment to the military, security and energy partnerships between the two countries. Looking to the future, they focused on the ways in which the two countries can work together to ensure global peace and stability, identifying the Indo-Pacific region and Afghanistan as two such opportunities. The Sochi informal summit is about taking a long-standing partnership and recasting it for the future, in which either power seeks a vital role for itself.

---

## बिज़नेस स्टैंडर्ड

*Date: 23-05-18*

### ग्रामीण संकट का हल

#### संपादकीय

देश के ग्रामीण इलाकों में लंबे समय से व्याप्त निराशा चिंता का विषय बन चुकी है। ग्रामीण क्षेत्रों में आय पर बढ़ रहे दबाव की एक पहचान यह है कि वहां मेहनताने की दर अत्यंत कम है। इस वर्ष जनवरी तक औसत ग्रामीण आय वृद्धि में 3 फीसदी की गिरावट देखने को मिली थी। यह वृद्धि दर 2014 के बाद से न्यूनतम है। हकीकत में ग्रामीण क्षेत्रों में मेहनताने में एक अरसे से ठहराव देखने को मिल रहा है। वर्ष 2014 के मध्य में जब केंद्र में नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली

भाजपानीत राजग गठबंधन की सरकार आई तब से इसमें काफी धीमी वृद्धि देखने को मिली है। वर्ष 2014 के बाद से अब तक और 2007 से 2013 के बीच की ग्रामीण आय वृद्धि के आंकड़ों में अंतर देखें तो वे चौंकाने वाले हैं। श्रम आयोग के मुताबिक वर्ष 2014 से पहले वास्तविक ग्रामीण आय वृद्धि ने दो अंकों का स्तर छू लिया था।

आखिर ग्रामीण क्षेत्र की आय में यह ठहराव क्यों आया होगा? इसका एक उत्तर यह है कि देश को बीते चार साल में दो बार सूखे का सामना करना पड़ा। यह भी सच है कि आमतौर पर वृद्धि में धीमापन आया है। परंतु यह अपने आप में पूरी व्याख्या नहीं करता क्योंकि वृद्धि दर में गिरावट तो 2013 के पहले से ही शुरू हो गई थी। इसमें बाद में गति आई। भारतीय रिजर्व बैंक के शोध विभाग ने हाल ही में एक प्रपत्र जारी किया है जिसमें वर्ष 2001 के बाद के आंकड़ों की समीक्षा की गई है।

यह प्रपत्र कुछ ऐसे नतीजों पर पहुंचता है जिनका परीक्षण करना आवश्यक है। खासतौर पर ऐसा प्रतीत होता है कि वर्ष 2014 के बाद से मुद्रास्फीति में लगातार कमी का संबंध काफी हद तक ग्रामीण आय में ठहराव से है। वर्ष 2014 के पहले खाद्य उत्पादों की महंगाई ने कृषि क्षेत्र में वृद्धि उत्पन्न की और इसके चलते उन लोगों की आय में इजाफा हुआ जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि क्षेत्र से जुड़े थे या उस पर निर्भर थे। संभव है कि 2014 के बाद से निर्यात और आयात मूल्य का अनुपात कृषि क्षेत्र के खिलाफ हो गया और गैर कृषि क्षेत्र की वस्तुएं कृषि उपज की वस्तुओं की तुलना में लगातार महंगी होती जा रही हैं। इससे ग्रामीण क्षेत्र के लोगों की क्रय शक्ति कमजोर होने लगी। ग्रामीण आय की वृद्धि दर को प्रभावित करने वाले अन्य अहम कारक भी हैं। इनमें से एक है गैर कृषि ग्रामीण उत्पादन में मजबूती। हमारे देश में विनिर्माण क्षेत्र श्रम की ढेर सारी मांग की खपत कर लेता है। आरबीआई के प्रपत्र में कहा गया है कि विनिर्माण क्षेत्र के मेहनताने ने ग्रामीण क्षेत्र के मेहनताने पर सकारात्मक असर डाला है। विनिर्माण में मंदी ने श्रम की मांग कम की है। इससे अकुशल कर्मियों की आय कमजोर हुई है। इससे ग्रामीण आय प्रभावित हुई है।

हम जानते हैं कि हमारे देश में ग्रामीण आय काफी हद तक कामगारों की मोलभाव करने की क्षमता पर निर्भर करती है। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (मनरेगा) जैसी रोजगार योजना 2000 के दशक के मध्य से आरक्षित ग्रामीण आय का प्रतीक रही है। आंकड़ों और प्रमाण से पता चलता है कि इससे ग्रामीण आय बढ़ाने में मदद मिली है। हाल के वर्षों में मनरेगा के तहत प्रति परिवार काम के दिनों की तादाद लगातार कम हुई है। ऐसा तब है जबकि दो सूखे के कारण काम की काफी मांग रही। इससे पता चलता है कि सरकार को किस दिशा में पेशकदमी करनी है। उसे राज्यों को मनरेगा के भुगतान में देरी करना बंद करना चाहिए और इस योजना को प्रभावी ढंग से लागू करना चाहिए।

*Date: 23-05-18*

**हमारे दौर में मार्क्स की अहमियत**

## तीन शुरुआती औद्योगिक क्रांतियों में पूंजीवाद न केवल बचा रहा बल्कि वह फला-फूला भी। परंतु क्या अब उसकी क्षमताएं चुक रही हैं?

### नितिन देसाई

हमारे वक्त के संभवतः सबसे प्रभावशाली राजनीतिक दार्शनिक कार्ल मार्क्स की 200 वीं वर्षगांठ इस महीने थी। ऐसे वक्त में जबकि पूंजीवाद न केवल यूरोप में बल्कि दुनिया के अन्य हिस्सों में भी डगमगाता नजर आ रहा है तो यह देखना उचित होगा कि हम पूंजीवाद के विकास को लेकर मार्क्स के सिद्धांतों से क्या कुछ सीख पाते हैं। मार्क्स ने पूंजीवाद के गणित को सही तरीके से समझा था और कम्युनिस्ट घोषणापत्र में उन्होंने इसकी ऐतिहासिक भूमिका को रेखांकित भी किया था। उन्होंने पूंजीवाद की निरंतर नवाचार की कोशिश के बारे में लिखा और कहा कि उत्पादन को लेकर निरंतर क्रांतिकारी तरीके अपनाने, तमाम सामाजिक परिस्थितियों को बाधित करने तथा निरंतर अनिश्चितता और विरोध के मामले में इसने तमाम पुराने बुर्जुआ दौर को पीछे छोड़ दिया। उन्होंने वैश्वीकरण की पहचान कर ली थी। हालांकि इसके आगमन में उनके अनुमान से अधिक वक्त लगा। उन्होंने कहा था कि पूंजीवाद हर जगह घर कर जाएगा और हर तरह के संपर्क कायम करेगा। उन्होंने कहा था कि उद्योगों के लिए कच्चा माल स्थानीय नहीं रह जाएगा बल्कि वह दूरदराज इलाकों से लाया जाएगा। ऐसे उद्योग होंगे जिनके उत्पाद केवल स्वदेश में बल्कि विदेशों में भी इस्तेमाल किए जाएंगे। इस तरह उत्पादन और खपत के मामले में दुनिया के हर देश का सार्वत्रिक चरित्र होगा। उन्होंने पर्यावरण के महत्व को पहचानते हुए अपनी विश्व प्रसिद्ध कृति दास कैपिटल (हिंदी में पूंजी) में लिखा, 'श्रम ही भौतिक संपदा का इकलौता स्रोत नहीं है। जैसा कि विलियम पेट्टी कहते हैं श्रम भौतिक संपदा का पिता है परंतु पृथ्वी उसकी मां है।'

मार्क्स को पूंजीवादी आर्थिक तंत्र की उतनी ही समझ थी जितनी कि किसी अन्य समकालीन अर्थशास्त्री को। परंतु अपने समकालीन अर्थशास्त्रियों से अलग उनकी रुचि आर्थिक तंत्र को बेहतर चलाने के तरीके तलाशने के बजाय उसे बदलने में थी। इसी बात से इतना मूल्यवान योगदान कर सके। पूंजीवाद के उद्भव को लेकर क्रिटिक ऑफ पॉलिटिकल इकनॉमी में वह लिखते हैं, 'विकास के एक खास चरण में, समाज की भौतिक उत्पादक ताकतों और उत्पादन के मौजूदा संबंधों के बीच संघर्ष उत्पन्न होता है। दूसरे शब्दों में यह संघर्ष उन संपत्ति संबंधों से होता है जिनके ढांचे में वे अब तक संचालित हो रहे थे। ये संबंध उत्पादक ताकतों के विकास के स्वरूप से उनकी राह का रोड़ा बन जाते हैं। इसके बाद सामाजिक क्रांति के युग की शुरुआत होती है। आर्थिक बुनियाद में आने वाला बदलाव आज नहीं तो कल संपूर्ण ढांचे में बदलाव की वजह बनता है।' मार्क्स का यह निर्धारण यांत्रिक नहीं था। उनका कहना था कि बदलाव वर्ग संघर्ष से आएगा और सर्वहारा उसका नेतृत्व करेगा। वह समझ गए थे कि जिनका शोषण किया जा रहा है वे निष्क्रिय बने रहेंगे क्योंकि वे अवसर की समानता और चयन की आजादी के भ्रम में अपना जीवन बिताएंगे। अब जातीय, धार्मिक और सांस्कृतिक पहचान भी इसमें शामिल हो गई हैं और एक भ्रामक चेतना का निर्माण कर रही हैं। यह भ्रामक चेतना कब और कैसे समाप्त होगी और वंचित तथा पीड़ित वर्ग में अन्याय की जड़ों को लेकर समझ कब विकसित होगी यह एक खुला प्रश्न है। परंतु मार्क्स ने यह भी कहा कि बदलाव का समय पूरी परिपक्वता के बाद आएगा। उन्होंने कहा, 'कोई भी सामाजिक व्यवस्था तब तक नष्ट नहीं हुई जब तक कि उसकी जरूरत पूरी करने वाली सभी उत्पादक शक्तियां पूरी तरह विकसित नहीं हो गई हों और वह तब तक पुरानी व्यवस्थाओं का स्थान नहीं लेती जब तक कि पुराने समाज के ढांचे में उनके अस्तित्व की भौतिक परिस्थितियां तैयार नहीं हुई हों।'

क्या पूंजीवाद की क्षमता अब समाप्त हो गई है? तीन प्रारंभिक औद्योगिक क्रांतियों में ऐसा नहीं हुआ और पूंजीवाद बचा रहा। बल्कि वह फला-फूला और दुनिया भर में फैला। यह उन देशों में भी फैला जो मार्क्सवादी विचारधारा के थे। परंतु अब चौथी औद्योगिक क्रांति आकार ले रही है। अन्य चीजों के अलावा नई सिंथेटिक सामग्री, 3डी प्रिंटिंग जैसे मुद्रण के नए तरीके, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, स्वचालन और रोबोटिक्स आदि सामने आ रहे हैं। मार्क्सवादी शैली में कहा जाए तो जब उत्पादन का नया तरीका सामने आता है तो निजी उद्यम के पूंजीवाद के संस्थापक सिद्धांतों से एक तरह की दूरी बनती है और कई वजहों से एक नए तरह के उत्पादन संबंध की मांग उभरती है।

**पहली बात,** पूंजी और श्रमिकों के बीच की पारस्परिक निर्भरता इस वजह से टूटी है क्योंकि मशीनों ने बहुत बड़े पैमाने पर श्रमिकों का स्थान लिया। यह प्रतिस्थापन अतीत में भी हुआ है और मार्क्स ने कहा था, 'मशीनें पूंजीवाद द्वारा तैनात वे हथियार हैं जो विशिष्ट श्रम के विद्रोह को दबाने का काम करते हैं।' अब जिस पैमाने पर ढांचागत बेरोजगारी देखने को मिल रही है वह उत्पादन के नए माध्यमों की बदौलत है। इससे पूंजी के लिए मांग की कमी की चुनौती उत्पन्न होती है और समान अवसर का वह भ्रम भी सीमित होता है जो पूंजीवादी समाज में लोगों को सुसुप्त रखता है।

**दूसरा,** नई ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था आय को पूंजी और श्रम से दूर उन लोगों के पास ले जाती है जो ज्ञान तैयार करते हैं और उसके स्वामी हैं। चौथी औद्योगिक क्रांति इसी पर निर्भर है। पूंजीवादी अर्थव्यवस्था अब तक शिक्षा, शोध और बौद्धिक संपदा को ठीक ढंग से संभालने वाला तंत्र नहीं विकसित कर सकी है। बौद्धिक संपदा तो तेजी से पूंजीवाद विरोधी बन रही है।

**तीसरा,** भुगतान और विपणन को डिजिटलीकृत करने के चलते इंटरनेट अर्थव्यवस्था के तेजी से विकसित होने की संभावना है। इससे कॉर्पोरेट शक्ति का संघटन होगा। इस मार्ग में बाधा केवल नए कारोबारी हैं। बहरहाल इस व्यवस्था में ताकत नवाचारियों से फाइनेंस करने वालों की ओर स्थानांतरित हो सकती है।

**चौथी बात,** यह नई अर्थव्यवस्था स्वाभाविक तौर पर वैश्विक रुझान रखती है। यह बात पूंजीवाद के विकास संबंधी मार्क्स के विचार के अनुरूप ही है। बहरहाल, प्रतिस्पर्धा को संभालने और कॉर्पोरेट प्रशासन के लिए जैसे संस्थानों की आवश्यकता है वे नजर नहीं आ रहे। बिना नियमन का पूंजीवाद स्थायी नहीं हो सकता।

इन तमाम बातों से यह संभावना पैदा होती है कि लोग मौजूदा आर्थिक तंत्र के पीछे के तर्क पर सवाल करेंगे और कर्मचारियों के स्वामित्व जैसे विकल्पों के बारे में बात करेंगे। सूचना प्रौद्योगिकी कंपनियों में कर्मचारियों की हिस्सेदारी देखने को मिल भी रही है। सार्वभौमिक मूलभूत आय जैसे उपायों की बदौलत पात्रता को रोजगार से अलग करना हमें उस मानवतावादी समाज के करीब ला सकता है जिसका जिक्र मार्क्स ने किया था। उन्होंने कहा था कि पुराने वर्गीय बुर्जुआ समाज की जगह हमें एक ऐसी व्यवस्था कायम करनी चाहिए जिसमें विकास का एक ही पैमाना हो, प्रत्येक का विकास।

## सरकार को बिना किसी देरी शिक्षा के तंत्र को ठीक करने के साथ-साथ कारोबारी सुगमता की स्थिति सुधारने और श्रम की उत्पादकता बढ़ाने के ठोस कदम उठाने चाहिए

डॉ. भरत झुनझुनवाला , (लेखक वरिष्ठ अर्थशास्त्री एवं आइआइएम बेंगलुरु के पूर्व प्रोफेसर हैं)



पिछले दो साल से रुपये का मूल्य लगभग 64 रुपये प्रति डॉलर पर स्थिर रहा है, लेकिन पिछले दो महीनों में यह फिसलकर 68 रुपये के स्तर पर पहुंच गया है। यानी डॉलर के सामने रुपया कमजोर हो गया है। जैसे एक डॉलर के बदले पहले यदि 64 पेंसिल मिलती थीं तो अब 68 मिलने लगी हैं। इसका अर्थ हुआ कि पेंसिल का मूल्य कम हो गया है। विश्लेषकों का मानना है कि आने वाले समय में रुपया 70 रुपये या इससे भी नीचे जा सकता है। रुपये का मूल्य बाजार में तय होता है। जिस प्रकार मंडी में आलू के दाम मांग और आपूर्ति से तय होते हैं उसी प्रकार

विदेशी मुद्रा बाजार में कुछ लोग डॉलर बेचते हैं और कुछ खरीदते हैं। जब डॉलर की आपूर्ति ज्यादा होती है तो डॉलर के दाम कम और रुपये के दाम ज्यादा हो जाते हैं। इसके विपरीत जब डॉलर की मांग ज्यादा होती है और आपूर्ति कम होती है तो डॉलर के दाम बढ़ते हैं और उसी अनुरूप में रुपये के दाम गिरते हैं। फिलहाल ऐसा ही हो रहा है। ऐसे में यक्ष प्रश्न यही है कि इस समय डॉलर की मांग ज्यादा और आपूर्ति कम क्यों हो रही है? डॉलर की मांग बढ़ने का इस समय प्रमुख कारण तेल के बढ़ते मूल्य दिखता है। अप्रैल 2018 में अंतरराष्ट्रीय बाजार में कच्चे तेल का दाम 70 डॉलर प्रति बैरल था जो वर्तमान में उठकर 80 डॉलर प्रति बैरल हो गया है। साथ ही साथ रुपये का मूल्य 64 रुपये प्रति डॉलर से गिरकर 68 रुपये प्रति डॉलर हो गया है।

दोनों घटनाक्रम समांतर चल रहे हैं। तेल के दाम बढ़ने से भारत की तेल कंपनियों को तेल की खरीद के लिए डॉलर की खरीद ज्यादा करनी पड़ती है इसलिए डॉलर की मांग ज्यादा है, डॉलर का दाम बढ़ रहा है और रुपये का दाम घट रहा है। तेल के बढ़ते दामों का तो हम कुछ नहीं कर सकते, लेकिन यदि हम ज्यादा मात्रा में डॉलर कमा लें यानी साथ में डॉलर की आपूर्ति भी बढ़ जाए तो रुपये का दाम स्थिर हो जाएगा। चूंकि तेल कंपनियों को तेल खरीदने के लिए ज्यादा डॉलर चाहिए इसलिए यदि भारतीय निर्यातक ज्यादा मात्रा में माल का निर्यात करके अधिक डॉलर अर्जित कर लें तो डॉलर की आपूर्ति बढ़ जाएगी और मांग एवं आपूर्ति का संतुलन पूर्ववत बना रहेगा। यूं समझिए कि मंडी में यदि आपूर्तिकर्ता और खरीददार दोनों ही साथ-साथ बढ़ जाएं तो आलू के दाम नहीं बढ़ते हैं। इस समय तेल की खरीद के लिए डॉलर की मांग की काट यही हो सकती है कि हम डॉलर की आपूर्ति बढ़ाएं।

डॉलर की आपूर्ति हमें मुख्यतः दो मर्दों से मिलती है। एक रास्ता हमारे निर्यात हैं। हमारे उद्यमी ऑटो पाइस अथवा गलीचों जैसी वस्तुओं का निर्यात करके डॉलर अर्जित करते हैं। वे इस डॉलर को भारतीय मुद्रा बाजार में बेचते हैं। यदि हम अपने निर्यात बढ़ा सकते तो बड़े हुए तेल के दाम को अदा कर सकते थे, लेकिन इस समय हमारे निर्यात भी दबाव में हैं। यानी एक तरफ तेल के लिए डॉलर की मांग ज्यादा और दूसरी तरफ निर्यात दबाव में आने से डॉलर की आपूर्ति कम हो रही है। यह आश्चर्यजनक है कि इस समय निर्यात दबाव में है जबकि एनडीए सरकार के पिछले चार वर्षों में हाईवे और बिजली की आपूर्ति जैसे बुनियादी ढांचे में काफी सुधार हुआ है। इन सुधारों के चलते हमारे उद्योगों की उत्पादन लागत कम हुई है और उनके लिए व्यापार करना सरल हुआ

है। इसलिए विश्व बाजार में हमारी प्रतिस्पर्धा शक्ति बढ़ी है। इस स्थिति में तो हमें अधिक मात्रा में डॉलर अर्जित करने थे, लेकिन यहां दबाव में दिखता निर्यात हैरान करने वाला है। अंतरराष्ट्रीय बैंक बीएनपी पारिबास के माइकल सैंड ने भारत के निर्यात दबाव में होने के तीन कारण बताए हैं। पहला कारण शिक्षित एवं कुशल कर्मियों की अनुपलब्धता है। हमारी शिक्षा व्यवस्था मुख्यतः सरकारी विश्वविद्यालयों द्वारा संचालित हो रही है जहां पर काम सरकारी नौकरियों के लिए सर्टिफिकेट छापकर देने मात्र का रह गया है।

अर्थव्यवस्था में सक्षम कर्मियों का नितांत अभाव है। लगभग एक वर्ष पहले विश्व बैंक ने ईज ऑफ डूइंग बिजनेस की रैंक में भारत को 30 देशों से आगे कर दिया था, लेकिन गहराई से पड़ताल करने पर पता लगा कि ईज ऑफ डूइंग बिजनेस की रैंक में यह सुधार मुख्यतः भारत में दीवालिया कानून के लागू होने के आधार पर हुआ था जिसमें दीवालिया कंपनियों को दी गई रकम को बैंकों द्वारा वसूल करना आसान हो गया था। रिपोर्ट में यह भी कहा गया था कि बिजली कनेक्शन लेना अथवा न्यायालय से किसी वाद का निपटारा होने में परिस्थिति यथावत एवं बदतर है। ईज ऑफ डूइंग बिजनेस के इन अहम पहलुओं में कोई सुधार नहीं हुआ था। बीएनपी पारिबास के अधिकारी कह रहे हैं कि भारत में ईज ऑफ डूइंग बिजनेस अभी भी कमजोर है और उत्पादन लागत के ऊंचा होने का यह दूसरा कारण है। तीसरा कारण यह है कि भारत में श्रम की उत्पादकता चीन की तुलना में कम है। गाजियाबाद में बाइक और कार के लिए केबल बनाने वाली एक कंपनी के प्रमुख अधिकारी ने बताया कि भारत और चीन के कर्मियों का वेतन बराबर है। लगभग उसी प्रकार की मशीनों पर वे उत्पादन करते हैं, लेकिन चीन के कर्मियों दोगुना उत्पादन करते हैं। इसलिए उत्पादन लागत में श्रम का हिस्सा भारत में चीन की तुलना में दोगुना है और इस कारण भारत में उत्पादन लागत ज्यादा आती है।

इस परिप्रेक्ष्य में यदि निर्यात को बढ़ाना है तो हमें शिक्षा, ईज ऑफ डूइंग बिजनेस और श्रम की उत्पादकता बढ़ाने के लिए मौलिक कदम उठाने होंगे। डॉलर की आपूर्ति का दूसरा स्नोट विदेशी निवेश है। यहां भी परिस्थिति विपरीत हो गई है। अमेरिका में राष्ट्रपति ट्रंप के आने के बाद अमेरिकी अर्थव्यवस्था में तेजी के संकेत मिल रहे हैं। दुनियाभर के निवेशक अमेरिका में निवेश को सुरक्षित मानते हैं, इसलिए पूंजी का बहाव एक बार फिर विकाशशील देशों से वापस अमेरिका की तरफ हो गया है। प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि 2017 में जनवरी से अप्रैल के बीच चार माह में भारत को 14 अरब डॉलर का विदेशी निवेश शेयरों और बांड बाजार में मिला था। वर्ष 2018 की इसी अवधि में यह घटकर मात्र 0.3 अरब डॉलर रह गया है। साफ है कि विदेशी निवेश से पहले हमें जो रकम मिल रही थी वह अब मिलनी बंद हो गई है। इस प्रकार डॉलर की आपूर्ति के दोनों स्नोटनिर्यात और विदेशी निवेश-संकट में पड़ गए हैं।

हमारे मुद्रा बाजार में डॉलर की आपूर्ति कम हो गई है और साथ ही तेल की मांग बढ़ने से भी हमारा रुपया फिसल रहा है। हम तेल के दामों में हो रही वृद्धि अथवा विश्व पूंजी के अमेरिका की तरफ हो रहे बहाव को नहीं रोक सकते। यह हमारी सरकार के अधिकार के बाहर की बातें हैं, लेकिन अपनी अर्थव्यवस्था में उत्पादन की लागत को कम करना हमारी सरकार के नियंत्रण में है। ऐसे में सरकार को चाहिए कि शिक्षा, ईज ऑफ डूइंग बिजनेस और श्रम की उत्पादकता बढ़ाने के लिए ठोस कदम उठाए, अन्यथा रुपये में फिसलन और ज्यादा बढ़ती जाएगी।



## विकास की डगर पर चुनौतियां

**जयंतीलाल भंडारी**

यकीनन इन दिनों दुनिया के आर्थिक संगठनों की जो शोध व अध्ययन की रिपोर्टें प्रकाशित हो रही हैं, उनमें भारत की तेज आर्थिक रफ्तार तथा दस-बारह सालों में भारत के तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था बनने के निष्कर्ष प्रस्तुत किए जा रहे हैं। लेकिन इन अध्ययन-रिपोर्टों में यह भी कहा जा रहा है कि भारत को विकास की डगर पर दिखाई दे रही कई चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामना करना होगा। कच्चे तेल की तेजी से बढ़ती कीमतों से अर्थव्यवस्था को बचाने की रणनीति अपनानी होगी। विदेश व्यापार का घाटा कम करना होगा। निर्यात बढ़ाने होंगे। देश में कारोबार के वातावरण में सुधार लाना होगा। इसमें कोई दो मत नहीं कि पूरी दुनिया भारत की आर्थिक संभावनाओं को स्वीकार कर रही है। हाल ही में आठ मई को दुनिया के ख्यात संगठन लोवी इंस्टीट्यूट के द्वारा प्रकाशित एशिया पावर इंडेक्स में आर्थिक सहित विभिन्न पैमानों पर एशिया प्रशांत क्षेत्र के पच्चीस देशों की सूची में भारत को चौथी सबसे प्रमुख शक्ति बताया है। साथ ही भारत को भविष्य की विशाल शक्ति भी बताया गया है।

इसी तरह पिछले दिनों एशियाई विकास बैंक ने कहा है कि चालू वित्तवर्ष के दौरान भारत की सात प्रतिशत से अधिक अनुमानित आर्थिक वृद्धि दर आश्चर्यजनक रूप से काफी तेज है और अगर यह गति बनी रहती है तो अर्थव्यवस्था का आकार एक दशक के भीतर ही दोगुना हो जाएगा। हार्वर्ड विश्वविद्यालय में अंतरराष्ट्रीय विकास केंद्र ने विकास रिपोर्ट 2018 में कहा कि भारत की अर्थव्यवस्था एक दशक में सबसे तेजी से बढ़ने वाली अर्थव्यवस्था होगी। भारत की वृद्धि दर चीन और अमेरिका से अधिक रहेगी। पिछले दिनों अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष (आइएमएफ) के द्वारा प्रकाशित 'वर्ल्ड इकोनॉमिक आउटलुक' में कहा गया है कि भारत फ्रांस को पीछे छोड़ दुनिया की छठी बड़ी अर्थव्यवस्था बन गया है। सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के आकार की दृष्टि से भारत 2.6 लाख करोड़ डॉलर मूल्य की अर्थव्यवस्था वाला देश है। रिपोर्ट के मुताबिक पांच अन्य अर्थव्यवस्थाएं जिनके नाम भारत से ऊपर हैं, उनमें अमेरिका, चीन, जापान, जर्मनी और ब्रिटेन हैं। आइएमएफ का कहना है कि यदि भारत आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया को वर्तमान की तरह निरंतर जारी रखता है तो वर्ष 2030 तक वह दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन सकता है। इसी तरह विश्वविख्यात ब्रिटिश ब्रोकरेज कंपनी हांगकांग एंड शंघाई बैंक कॉर्पोरेशन (एचएसबीसी) ने अपनी अध्ययन रिपोर्ट में कहा है कि हालांकि वर्ष 2016-17 में भारत की आर्थिक वृद्धि के रास्ते में बाधा उत्पन्न हुई थी लेकिन अब भारत में आर्थिक सुधारों के कारण अर्थव्यवस्था का प्रभावी रूप दिखाई देगा और वर्ष 2028 तक भारत दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन सकता है।

उल्लेखनीय है कि भारत के वित्त मंत्रालय के द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट में कहा गया है कि देश में जिलेवार कृषि-उद्योग के विकास, बुनियादी ढांचे में मजबूती तथा निवेश मांग के निर्माण में यथोचित वृद्धि करने के लिए जो रणनीति बनाई गई उससे 2025 तक भारतीय अर्थव्यवस्था का आकार 5,000 अरब डॉलर तक पहुंच जाएगा, जो कि अभी 2500 अरब डॉलर के करीब है। स्पष्ट है कि दुनिया की विभिन्न आर्थिक अध्ययन रिपोर्टें संकेत दे रही हैं कि आगामी कुछ वर्षों में भारत की अर्थव्यवस्था तेजी से आगे बढ़ेगी और दस-बारह वर्ष बाद यह तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन सकती है। निस्संदेह भारतीय अर्थव्यवस्था से जुड़े कई सकारात्मक पक्ष भी स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं। आइएमएफ का कहना है कि 2018 में

भारत की विकास दर 7.4 फीसद रहेगी तथा 2019 में 7.8 फीसद हो जाएगी। जबकि चीन में 2018 में विकास दर 6.6 फीसद और 2019 में 6.4 फीसद रहने का अनुमान है। ऐसे में भारत सबसे तेज विकास दर वाला देश दिखाई दे रहा है। भारत का निर्यात वर्ष 2017-18 में लक्ष्य के अनुरूप 300 अरब डॉलर के ऊपर पहुंचा है। भारत का शेयर बाजार, भारत का विदेशी मुद्रा भंडार और भारतीय रुपया अच्छी स्थिति में हैं। जीडीपी में प्रत्यक्ष कर का योगदान बढ़ा है। इसी प्रकार आर्थिक उदारीकरण के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था को चमकाने में यहां के मध्यवर्ग की भी विशेष भूमिका है। देश की विकास दर के साथ-साथ शहरीकरण की ऊंची वृद्धि दर के बलबूते भारत में मध्यवर्ग के लोगों की आर्थिक ताकत तेजी से बढ़ी है और यह वर्ग लंबे समय तक देश में अधिक उत्पादन, अधिक बिक्री और अधिक मुनाफे का स्रोत बना रहेगा।

अर्थव्यवस्था की चमकीली संभावनाओं को साकार करने के लिए कई चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामना करना होगा। अब देश की अर्थव्यवस्था को उंचाई देने के लिए मैन्युफैक्चरिंग सेक्टर की अहम भूमिका बनानी होगी। मेक इन इंडिया योजना को गतिशील करना होगा। उन ढांचागत सुधारों पर भी जोर देना होगा, जिनसे निर्यात-मुखी विनिर्माण क्षेत्र को गति मिल सके। ऐसा किए जाने से भारत में आर्थिक व औद्योगिक विकास की नई संभावनाएं आकार ग्रहण कर सकती हैं। पिछले दिनों प्रकाशित विश्व बैंक की रिपोर्ट में कहा गया है कि मैन्युफैक्चरिंग सेक्टर को बढ़ावा देकर भारत चीन और पश्चिमी देशों को पीछे छोड़ दुनिया का नया कारखाना बन सकता है।

हालांकि इस समय दुनिया के कुल उत्पादन का 18.6 फीसद अकेला चीन करता है। लेकिन कुछ वर्षों से चीन में आई लगातार सुस्ती और युवा कार्यशील आबादी में कमी व बढ़ती श्रम-लागत के कारण चीन में औद्योगिक उत्पादन में मुश्किलें बढ़ती जा रही हैं। ऐसे में उत्पादन गुणवत्ता के मामले में चीन से आगे चल रहे भारत के मैन्युफैक्चरिंग सेक्टर में आगे बढ़ने की अच्छी संभावनाएं मानी जा रही हैं। ख्यात वैश्विक शोध संगठन स्टैटिस्टा और डालिया रिसर्च के द्वारा मेड इन कंट्री इंडेक्स 2016 में उत्पादों की साख के अध्ययन के आधार पर कहा गया है कि गुणवत्ता के मामले में 'मेड इन इंडिया', 'मेड इन चाइना' से आगे है। न केवल देश में मेक इन इंडिया की सफलता के लिए कौशल प्रशिक्षित युवाओं की कमी को पूरा करना होगा, बल्कि दुनिया के बाजार में भारत के कौशल प्रशिक्षित युवाओं की मांग को पूरा करने के लिए भी कौशल प्रशिक्षण के रणनीतिक प्रयास जरूरी होंगे। देश के उद्योग-व्यवसाय में कौशल प्रशिक्षित लोगों की मांग और आपूर्ति में लगातार बढ़ता अंतर दूर करना होगा। भारत में करीब बीस फीसद लोग ही कौशल प्रशिक्षण पाए हुए हैं, जबकि चीन में ऐसे लोगों की संख्या 91 प्रतिशत है।

इस समय अंतरराष्ट्रीय बाजारों में कच्चे तेल की कीमतों में मौजूदा बढ़े हुए स्तर से गिरावट का कोई संकेत नहीं है। ऐसे में तेल की कीमतों में वृद्धि से होने वाली मुश्किलों के मद्देनजर तेल कीमतों पर नियंत्रण जरूरी है। वैश्विक स्तर पर बढ़ती हुई तेल कीमतों का सामना करने के लिए भारत ने चीन के साथ मिलकर तेल उत्पादक देशों पर दबाव बनाने की जो रणनीति बनाई है, उसे सफलतापूर्वक कार्यान्वित करना होगा।

जरूरी है कि सरकार पूरा ध्यान अपनी ऊर्जा नीति को नए सिरे से तैयार करने पर केंद्रित करे ताकि मौजूदा हालात के लिहाज से बेहतरीन ऊर्जा नीति तैयार की जा सके और पेट्रोल-डीजल की बढ़ती कीमतों से होने वाली आर्थिक मुश्किलों को कम किया जा सके। चूंकि देश तेजी से विकास कर रहा है और 2030 तक आने वाले वर्षों के दौरान देश की ऊर्जा संबंधी मांग बहुत तेजी से बढ़ेगी, इसलिए कच्चे तेल के आयात पर इसकी निर्भरता में भी इजाफा होगा। ऐसे में आवश्यकता इस बात की होगी कि सरकार एक एकीकृत ऊर्जा नीति तैयार करे। बिजली से चलने वाले वाहनों पर जोर देना होगा।



इलेक्ट्रिक कारों को टैक्स कम करके बढ़ावा देना होगा। साथ ही सार्वजनिक परिवहन सुविधा को सरल और कारगर बनाना होगा।



*Date: 22-05-18*

## अमीर भारत

### संपादकीय

भारत विश्व का छठा सबसे धनी देश बन गया है। अफ्रो-एशिया बैंक नियंत्रणसंपत्ति पलायन समीक्षा रिपोर्ट के अनुसार भारत की कुल संपत्ति 8230 अरब डॉलर की है। इस रिपोर्ट को सच मान लें तो 2027 तक भारत, ब्रिटेन और जर्मनी को पछाड़ विश्व का चौथा सबसे धनी देश बन जाएगा। भारत की संपत्ति का मतलब भारतीयों की संपत्ति ही है। ध्यान रखिए कि रिपोर्ट तैयार करते समय किसी देश के हर व्यक्ति की कुल निजी संपत्ति को आधार माना गया है।

प्रश्न स्वाभाविक है कि आखिर, भारत की संपत्ति में इतनी तेजी से वृद्धि का कारण क्या है? जवाब इसी रिपोर्ट में है। रिपोर्ट के अनुसार भारत में संपत्ति सृजन के कारणों में उद्यमियों की भारी संख्या, अच्छी शिक्षा पण्डाली, सूचना प्रौद्योगिकी का शानदार परिदृश्य, कारोबारी प्रक्रिया की आउटसोर्सिंग, रियल एस्टेट, हेल्थकेयर और मीडिया क्षेत्र शामिल हैं यानी देश में विश्व स्तर के उद्यमी खड़े हो गए हैं, उसके अनुरूप कारगर शिक्षा व्यवस्था हमने विकसित कर ली है..सूचना प्रौद्योगिकी में तो दुनिया भारत का लोहा मानती ही है..स्वास्थ्य और मीडिया क्षेत्र भी संपत्ति सृजन के कारण बन रहे हैं। रिपोर्ट का यह भी मतलब है कि संपत्ति सृजन के इन कारणों में आने वाले कई वर्षों में हास होने की संभावना नहीं है। रिपोर्ट भारत के पिछड़ने या विकास न करने आदि आरोप को गलत साबित करती है।

किंतु इसके दो पक्ष और हैं। रिपोर्ट में कृषि की चर्चा नहीं है। भारत से कृषि को निकाल दिया जाए तो करीब 56-57 प्रतिशत लोगों का जीविकोपार्जन ही खत्म हो जाता है। इतनी संख्या में लोग जीविकोपार्जन के लिए कृषि पर निर्भर हैं, और वह संपत्ति सृजन का कारण नहीं है तो यकीनन गहरी चिंता का विषय है। दूसरे, भारत भले छठे नम्बर पर है, लेकिन प्रमुख देशों की संपत्तियों के मामले में काफी पीछे है। अमेरिका 62584 अरब डॉलर की संपत्ति के साथ शीर्ष स्थान पर है। 24,803 अरब डॉलर की संपत्ति के साथ चीन दूसरे और 19,522 अरब डॉलर के साथ जापान तीसरे स्थान पर है। रिपोर्ट में यह भी साफ है कि आने वाले दशक में चीन की संपत्ति में उल्लेखनीय वृद्धि होगी एवं वर्ष 2027 तक यह बढ़कर 69,449 अरब डॉलर और अमेरिका की संपत्ति बढ़कर 75,101 अरब डॉलर हो जाएगी। साफ है कि हम भले छठे या कुछ वर्ष बाद नौवें स्थान पर पहुंच जाएं इन देशों के सामने कमजोर ही रहने वाले हैं।

## The health-tech of tomorrow

*Artificial intelligence (AI) has the potential to address shortfalls in the healthcare industry.*

**Rana Kapoor, [The writer is managing director and chief executive officer, Yes Bank and chairman, Yes Global Institute]**



With the artificial intelligence (AI) health market expected to increase exponentially — from \$600 million in 2014 to a whopping \$6.6 billion by 2021 — this next-generation super hybrid will act as the “invisible hand” redefining and revolutionising the global healthcare landscape. Not only are these “new-age innovations” catalysing existing healthcare systems and transforming them into “smart wellness” delivery mechanisms, they are also creating a brand new market paradigm for technological titans such as Microsoft, Apple, IBM and start-ups alike.

With the Indian healthcare market estimated to grow to \$372 billion by 2022, coupled with growing healthcare needs of a 1.3 billion strong population, successfully leveraging AI, is vital to catapulting the “healthcare of today” into the “health-tech of tomorrow”.

**First**, the potential of AI through machine learning and big data is rewiring the existing healthcare landscape by economising healthcare costs. Integrating big data with wellness could potentially save the healthcare industry up to \$100 billion per year, and as a result, allow companies in the sector to manage their bottom line to greater effect.

**Second**, there will be an estimated shortage, globally, of 12.9 million healthcare professionals by 2035. Merging cognitive computing and healthcare is the key to bridging this man-power gap. Such an enterprise can provide superior health solutions to a growing world population. Artificial intelligence can address the healthcare demands of the global population and magnify healthcare outreach at an affordable cost. An example to illustrate the point is Your.MD. This service has a personal physician coupled with an AI-powered mobile application that uses algorithms to create a personalised health map for the user, including linking a patients symptoms to possible causes as well as possible remedies and steps to treatment.

**Third**, AI, with a greater focus on clinical diagnoses and the identification of diseases can help augment the traditional healthcare sector. By running algorithms and analysing big data patterns, AI can detect trends to enhance disease diagnosis and create treatment plans in order to efficiently streamline the healthcare needs of a patient. A case in point is IBM WatsonPaths, which consists of cognitive computing technologies that allow for medical professionals to make a medical diagnosis with greater accuracy using electronic medical records.

**Finally**, the potential of AI and Internet of Things is evolving towards a more patient-centric approach by personalising healthcare based on the needs of the consumer. Apple Inc. has, through its wearable tech-gadgets and the Internet of Things (IoT), already managed to successfully capture health data with the aim to improve wellness and effectively manage the lifestyles of its users. This data can be harnessed to create an electronic health record of patients and can subsequently be used to act as a baseline repository of information for preventive treatment.

The quintessence of AI lies in its unparalleled potential to transform the face of the global traditional healthcare system. This new age health-tech market is being catalysed by predictive analytics and cognitive-based learning, thereby catapulting the growth of this industry in a similar manner to financial services and Fintech.

In India, where we rank a lowly 154th in the Healthcare Access and Quality Index, we must make collaborative efforts to unlock the potential of AI to create an enabling health technology ecosystem to match demand, optimise costs, and demonstrate value. Further, by leveraging the principles of DICE (Design, Innovation and Creativity-led Entrepreneurship), artificial intelligence is on the fast track to revolutionise the entire global healthcare scenario by providing futuristic “high quality-low cost”, patient-centric smart wellness solutions.



*Date: 22-05-18*

## **On the great Asian highway**

***India and China must forge an understanding to cooperate on regional connectivity projects***

**Syed Munir Khasru , [Syed Munir Khasru is chairman of the international think tank, The Institute for Policy, Advocacy, and Governance.]**

One of the key non-military issues that does not just bedevil India-China relations but also significantly affects many countries in the region is the inability of the two Asian giants to communicate, cooperate and coordinate on matters of regional trade and connectivity which could have benefited all. On that note, one hopes that the stand taken by External Affairs Minister Sushma Swaraj on declining to endorse China’s Belt and Road Initiative (BRI) at the just concluded Shanghai Cooperation Organisation (SCO) Foreign Ministers’ meeting is more of a strategic bargaining position, and not an instance of obstinate negative regionalism that has been plaguing the region for long.

### **The BBIN way**

Looking into South Asia, where most multi-country connectivity initiatives are usually deemed to be mere talk shops, one recent positive development has been the trial run, on April 23, of a Bangladesh-Nepal bus service through India under the Bangladesh-Bhutan-India-Nepal (BBIN) motor vehicles agreement. It shows that the ambition of establishing physical connectivity among the smaller states of

South Asia through India can eventually be realised and break the usual political gridlock that characterises the region. Although Bhutan failed to ratify the agreement due to opposition from its parliament, instead of halting progress, the country asked other stakeholders to move ahead and expressed hope of joining the initiative if and once it gets clearance from the parliament. Bhutan's positive go-ahead not only demonstrated the immense potential to be realised through simple cooperation but also showed that it is possible to implement pragmatic plans even when all members are not able to participate at the same time.

Poor connectivity is the major reason why intra-regional trade is among the lowest in South Asia. South Asia, with its 1.8 billion population, is only capable of conducting around 5% intraregional trade as connectivity remains a constant barrier. Non-tariff barriers (NTBs) continue to plague the region and addressing infrastructure deficits can do away with 80% of the NTBs. In addition to enhancing trade, connectivity can significantly improve people-to-people interaction leading to better understanding, greater tolerance and closer diplomatic relations in the region.

States in South and Southeast Asia are involved in multiple regional initiatives led by India and China but are unable to get the benefit due to their slow progress. The South Asian Association for Regional Cooperation remains moribund with little hope of it becoming functional in the near future. The Bay of Bengal too remains among the least integrated regions in spite of having immense potential of enhancing trade through utilisation of its ports and waterways. The India-led Bay of Bengal Initiative for Multi-Sectoral Technical and Economic Cooperation (BIMSTEC) involving Bangladesh, Bhutan, India, Myanmar, Nepal, Sri Lanka, and Thailand, has made little progress. Serving as a funnel to the Malacca Straits, one of the world's busiest waterways, the Bay of Bengal has now become one of the most important strategic hotspots for global trade and all countries in BIMSTEC are losing out due to this prolonged period of dormancy. In all this time, the organisation has only had meetings, negotiations and leaders' summit and stalled free trade agreement negotiations. However, there has been some progress through the establishment of the BIMSTEC Energy Centre and a task force on Trans Power Exchange and Development Projects, which was established to develop a memorandum of understanding for the establishment of the BIMSTEC Grid Interconnection.

On the other hand, China is leading its own regional ambition with its BRI. A portion of the Maritime Silk Route crosses the Bay of Bengal and involves Bangladesh, Myanmar and Sri Lanka. Both China and India are pursuing regional initiatives on their own which could lead to benefit for all involved states. Regional agendas could have been pursued efficiently if the initiatives were complementary rather than competing. If the BRI, BIMSTEC and BBIN were developed through coordination and consultation, led by the two Asian giants, the projects under the schemes could have been implemented more efficiently. With the minimum required cooperation in pursuing regional initiatives, India and China can significantly enhance trade, investment and connectivity in the region. This would not only would be a win-win for the two giants but also enormously benefit smaller countries.

### **Make good in Qingdao**

As Prime Minister Narendra Modi and Chinese President Xi Jinping meet again, after the Wuhan informal summit, in June for the SCO summit in Qingdao, China, they have an opportunity to forge a pragmatic understanding on the efficacy of regional initiatives through greater communication, enhanced cooperation and better coordination. In the end, slow moving regional projects end up hurting most the resource-constrained citizenry of the region who are deprived from the benefits emanating from well-thought-out and carefully strategised regional connectivity projects. Caught in the quagmire of

continental, regional and sub-regional geopolitics, the smaller states are losing out and having to pay the price of missed economic opportunities as the two Asian giants shake hands but seldom see eye to eye even on matters of common economic and strategic interests. Mr. Modi and Mr. Xi must seize the chance to change this.

---